Dr. Vandana Suman
Associate professor
Dept. of Philosophy
H.D. Jain College, Ara
M.A semester - 1 Philosophy CC-01
Indian Epistemology & Logic

SEPTEMBER '20

M	T	W	T	F	S	S
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

OCTOBER '20

M	T	W	T	F	S	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

APPOINTMENTS / MEETINGS

'Anuplabdhi' (अनुपलब्धि)

भारतीय दर्शन के प्रमुख नौ सम्प्रदायों (तीन नास्तिक और छः आस्तिक) में से मात्र भाट्ट मीमांसक और वेदान्ती ही अनुपलब्धि को स्वतंत्र प्रमाण के रूप में स्वीकार करते हैं। वेदान्त और भाट्ट मीमांसा के मतानुसार अभाव का साक्षात ज्ञान अनुपलब्धि है। दूसरी ओर, अन्य भारतीय दार्शनिक अभाव के ज्ञान को प्रत्यक्ष अथवा अनुमानजन्य प्रमाणित करने की चेष्टा करते हैं।

वेदान्त मतानुसार अभाव के ज्ञान के कई साधन हो सकते हैं, जैसे इस समय देवदत्त वन में है, इसी आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि इस समय देवदत्त घर में नहीं है। इस प्रकार कभी-कभी एकवस्तु को अन्यत्र उपस्थित जानकर किसी अन्य स्थान विशेष में उसके अभाव का ज्ञान शब्दों के माध्यम से भी होता है, यथा मेरे इस कथन से कि मेरे सिर में दर्द नहीं है आपको मेरे सिर में दर्द के अभाव का ज्ञान होता है। यह ज्ञान मेरे लिए भले अनुभूतिजन्य हो आपके लिए शब्द ज्ञान ही है। इसके अतिरिक्त कुछ स्थितियों में एक भिन्न प्रकार से भी अभाव का ज्ञान होता है, यथा इस समय इस कमरे में हाथी की अनुपस्थिति (अभाव) का ज्ञान। वेदान्त मतानुसार यह ज्ञान न तो प्रत्यक्ष ज्ञान

है, न अनुमान अथवा शब्द जन्य। है,
वेदान्ती (अनुपलब्धि) प्रमाण कहते हैं। वेदान्त के मतानुसार अनुपलब्धि अभाव का साक्षात् ज्ञान है। जैसे - यहाँ वृक्ष नहीं है, यहाँ वृक्ष के अभाव का ज्ञान एक साक्षात् ज्ञान है, तथापि अनुपलब्धि 'प्रत्यक्ष ज्ञान' से भिन्न है। वेदान्त मतानुसार घट के अभाव का ज्ञान घट के अदर्शन (अन + उपलब्धि) के कारण होता है। अतः घट के अभाव का ज्ञान प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं। वेदान्त परिभाषा में अनुपलब्धि की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि ज्ञानरूप कारण से उत्पन्न न होनेवाले जो असाधारण अभाव के अनुभव का कारण है वही अनुपलब्धि कहलाता है। इसी अर्थ में वेदान्ती अनुपलब्धि को प्रत्यक्षादि अन्य प्रमाणों से भिन्न मानते हैं क्योंकि प्रत्यक्षादि अन्य प्रमाण या प्रमा किसी न किसी विषय-रूप-कारण से (यथा घटादि से) उत्पन्न होते हैं जबकि अनुपलब्धि का कारण 'असाधारण' (यथा घट का अभाव) होता है।

भाट्ट मीमांसक भी छठे प्रमाण के रूप में अनुपलब्धि को स्वीकार करते हैं। इस मत के अनुसार भाव और अभाव एक ही सत्ता के दो पक्ष हैं। इनमें

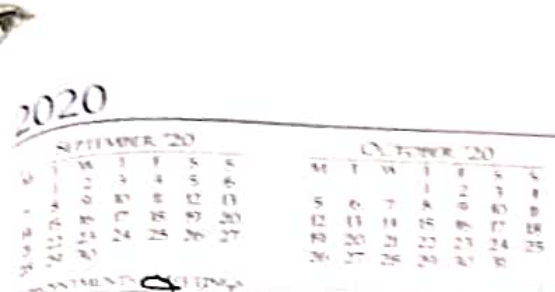

भाव का ज्ञान प्रत्यक्षादि पाँच प्रमाणों से तथा अभाव का ज्ञान अनुपलब्धि से होता है।

वेदान्तियों तथा भाट्ट मीमांसकों का यह अनुपलब्धि विषयक मत भारतीय दार्शनिक परम्परा में विवाद का विषय है। प्रभाकर मीमांसक प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान और अर्थापत्ति नामक पाँच प्रमाणों को ही स्वीकार करते हैं तथा अनुपलब्धि का खंडन करते हैं।

प्रभाकर मीमांसकों के अनुसार 'अभाव' की कोई सत्ता नहीं अतएव अभाव के ज्ञान के साधन के रूप में अनुपलब्धि प्रमा का वैध साधक नहीं है। न्यायमत यद्यपि अभाव के ज्ञान के साधन के रूप में अनुपलब्धि प्रमा का वैध साधन नहीं है। न्यायमत यद्यपि अभाव की वस्तुपरक सत्ता को स्वीकार करता है तथापि अनुपलब्धि प्रमाण को स्वीकार नहीं करता इस मत के अनुसार अभाव का ज्ञान प्रत्यक्ष से होता है। सांख्य मत भी प्रभाकरों की ही भाँति अभाव की वस्तुपरक सत्ता को स्वीकार नहीं करते। इस मत के अनुसार अभाव (या घटाभाव) किसी अधिष्ठान की विशेषता है तथा अधिष्ठान की अन्य विशेषताओं की भाँति अभाव का ज्ञान भी अधिष्ठान के ज्ञान के साथ ही हो जाता है।

AUGUST

20 THURSDAY

बौद्ध मत की 'अभाव' की व्याख्या करते हुए मानते हैं कि वस्तु का नहीं दिखना (मन + उपलब्धि) अनुपलब्धि होना) तब अभाव का द्योतक नहीं। बल्कि वो कुछ अन्य कारणों से गयी प्रत्यक्ष आदि की अनुपलब्धता अथवा अदर्शन के कारण भी अनुपलब्धि हो जाती है। इस अनुपलब्धि से वस्तु का अभाव सिद्ध नहीं होता। क्योंकि और बौद्ध मात्र प्रत्यक्ष और अनुमान को ही प्रमाण मानते हैं। न्याय वैशेषिक मत में बौद्ध [illegible] वैशेषिक सात पदार्थों को अभाव की मान्यता करते हैं। इस प्रकार न्याय वैशेषिक मत में अभाव को तत्व मीमांसीय स्थिति है। दूसरी ओर अभाव विषयक बौद्धों का मत सर्वथा विलक्षण है। इस मत में अभाव अथवा प्रतिपक्ष की तत्वमीमांसीय सत्ता नहीं किन्तु ज्ञान मीमांसीय दृष्टि से प्रतिपक्ष तथा अनुपलब्धि की अवधारणा महत्वपूर्ण है। क्योंकि अनुमान की समान अवधारणा पर आधारित है। इस हेतु [illegible] के निर्धारण के लिए बौद्ध आचार्य अभाव की चर्चा करते हैं। हेतु के कार्य के निर्धारण के निमित्त रूप अनुपलब्धि

बौद्ध-चिन्तन में अनुपेक्षणीय है। अभाव की चर्चा करते हुए बौद्ध मत एक विलक्षण अवधारणा 'अपोह' की चर्चा करते हैं। अपोहवाद के अनुसार किसी भी वस्तु का नामकरण वस्तु के विरोधी के प्रति निषेध की अभिव्यक्ति होती है, जैसे - गौ शब्द 'अ गौ' नहीं को सूचित करता है।

भारतीय दार्शनिक परम्परा में असत, अलीक (तुच्छ), निरुपाख्येय, प्रतिषेध तथा निःस्वभाव जैसे पद 'अभाव' के पर्यायवाची रूप में प्रयुक्त हुए हैं। प्रायः समस्त भारतीय दार्शनिक 'असत' की व्याख्या 'सत' के पदों में नहीं की जा सकती। इसे सत अथवा सत्ता का विरोधी समझा जाना चाहिए। मध्वाचार्य के अनुसार 'असत' कोई पदार्थ या तत्व नहीं बल्कि यह सत्ता का विरोधी है।

अभाव को 'असत' के रूप में परिभाषित करने पर एक समस्या सामने आती है। 'असत' एक संप्रत्यय है। प्रश्न है कि यदि असत सत्ता का विरोधी है तो उसे संप्रत्यय कैसे कहा जा सकता है? क्योंकि 'सत्ता' तो अपने विशुद्ध प्रत्ययवादी अर्थ में विचारमूलक या प्रत्ययात्मक ही है। दूसरी ओर असत को 'सप्रत्यय शून्य' भी नहीं कहा जा

सकता है क्योंकि यदि 'असत' संप्रत्यय शून्य है तो उस पर विचार कैसे करते हैं? इस समस्या का समाधान है। असत को 'अज्ञेय' कहा गया।

सम्पूर्ण शब्द है वस्तुतः 'असत' एक विरोधाभास विरोधाभास नहीं है। इस शब्द के अर्थ का संदर्भित करता है कि यह वह है जो नहीं है। इस अर्थ में असत को एक दुर्गम संप्रत्यय कहा जाता है।

भारतीय परम्परा में दार्शनिकों का एक बड़ा वर्ग 'अभाव' को 'असत' के रूप में स्वीकार करना चाहता है। इस मत के अनुसार अभाव की वस्तुपरक सत्ता नहीं, परन्तु 'असत' के संप्रत्यय में निहित विरोधाभास को देखते हुए यह वर्ग अभाव की ज्ञान-मीमांसीय व्याख्या की चेष्टा करता है। दूसरी ओर भारतीय दार्शनिकों का एक बड़ा वर्ग 'अभाव' को 'असत' से भिन्न मानता है। यह वर्ग अभाव की वस्तु सत्तामूलक व्याख्या करता है।

'भाट्ट' और वेदान्त मतानुसार अनुपलब्धि ज्ञान का एक स्वतंत्र साधन है। इनके अनुसार किसी प्रमाण की अनुपस्थिति स्वयं ही अभाव का एक प्रमाण या

अनुपलब्धि [illegible] है। यही [illegible] स्पष्ट करते [illegible] [illegible] अभाव [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] अनुपलब्धि [illegible] [illegible]।

अनुपलब्धि के [illegible] में [illegible] कहते हैं कि [illegible] [illegible] ज्ञान [illegible] किसी वस्तु का किसी [illegible] [illegible] पर [illegible] [illegible] [illegible] किसी [illegible] पाँच प्रमाणों [illegible] ज्ञान [illegible] [illegible] उपस्थिति [illegible] [illegible] वस्तु का [illegible] ज्ञान [illegible] होता है। [illegible] अभाव [illegible] अतः सिद्ध होता है। यही अनुपलब्धि है।

इसी प्रकार भी अनुपलब्धि को ज्ञान का साधन या प्रमाण नहीं माना जा सकता। [illegible] [illegible] के प्रत्यक्ष [illegible] के कारण [illegible] को [illegible] [illegible] का प्रत्यक्ष नहीं है। [illegible] [illegible] वास्तुतः प्रत्यक्षीकरण या प्रमाणों को [illegible] अनुपलब्धि [illegible] अपेक्षित है तथा वस्तु के

भाव के पक्ष में कोई प्रमाण न मिले तो वस्तु का अभाव माना जाना चाहिए और तभी इस प्रमाण को 'अनुपलब्धि' की संज्ञा दी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त जिस प्रकार स्थिति में जिस वस्तु की उपलब्धि होनी चाहिए उन परिस्थितियों में भी अगर उस वस्तु की उपलब्धि न हो तभी इसे अनुपलब्धि की संज्ञा दी जा सकती है। अतएव योग्यानुपलब्धि ही प्रमाण है।

वेदान्त परिभाषा में अनुपलब्धि के संबंध में तीन महत्वपूर्ण बातें बतलाई गई हैं: (क) अनुपलब्धि का विषय वस्तु का अभाव है, (ख) अनुपलब्धि साक्षात् ज्ञान है। इसमें स्मृति का संबंध नहीं होता तथा (ग) अनुपलब्धि ज्ञान का स्वतंत्र साधन है।

यहाँ एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि अज्ञान का ज्ञान कैसे होता है? अज्ञान चूँकि ज्ञान का अभाव है, अतएव इसको ज्ञान भी अनुपलब्धि के द्वारा ही होना चाहिए?

किन्तु विवरण प्रमेय संग्रह इस प्रश्न का उत्तर दूसरे प्रकार से देता है। विवरण प्रमेय संग्रह के अनुसार अज्ञान दो प्रकार का होता है — (क) किसी विशेष

वस्तु के ज्ञान का अभाव (ज्ञान-विशेषाभाव) तथा (ख) ज्ञान का सामान्य अभाव (ज्ञानमात्र भाव)। इनमें से ज्ञान विशेषाभाव का ज्ञान अनुपलब्धि से होता है तथा ज्ञानमात्र भाव का ज्ञान साक्षी भाव से होता है।

वेदान्त मतानुसार आत्मा अपने चरम और पारमार्थिक रूप में असीम तथा आनन्द है। पारमार्थिक रूप में सत्ता एक ही है जिसे अद्वैत-वेदान्ती (अद्वैत) की संज्ञा देते हैं किन्तु अपने सामान्य जीवन में हम आत्मा को सीमाबद्ध पाते हैं। अविद्या के बंधन के कारण दैनिक जीवन में 'इदम' और 'अहम' का भेद दिखता है, जबकि परमार्थतः इनमें कोई भेद नहीं। इस अज्ञान के कारण ही अन्तःकरण 'अहम' का रूप लेता है। ज्ञान-मात्र भाव में यह 'अहम' ज्ञाता रूप में प्रतिष्ठित होता है। यह 'अहम' भाव ही 'इदम' का सृजन करता है अर्थात 'अहम' दूसरी वस्तुओं से अपने आप को पृथक कर लेता है तथा पुनः उन्हें ज्ञेय समझकर उन्हें जानने की ओर प्रवृत्त होता है। इसी क्रम में वेदान्ती कहते हैं कि अज्ञान में ज्ञान का कारण विद्यमान होते हैं। यह (अहम् भाव) ही ज्ञानमात्र भाव है तथा अन्तःकरण साक्षी रूप से इसे जानता है।

अनुपलब्धि विषयक तीन प्रकार के मत भारतीय ज्ञानमीमांसा में पाये जाते हैं। प्रथम श्रेणी में वे ज्ञानमीमांसक हैं जिनके अनुसार अनुपलब्धि स्वतंत्र प्रमाण है। इस कोटि में भाट्ट मीमांसक और वेदान्ती आते हैं। द्वितीय श्रेणी में वे दार्शनिक हैं जो अभाव के ज्ञान के साधन के रूप में प्रत्यक्ष प्रमाण को ही स्वीकृत करते हैं। वे अनुपलब्धि को ज्ञान का स्वतंत्र साधन स्वीकृत नहीं करते। इस मत के समर्थकों के रूप में मुख्यतः नैयायिक तथा प्रभाकर मीमांसकों का उल्लेख किया जा सकता है। तृतीय श्रेणी में वे ज्ञानमीमांसक हैं जो अभाव का ज्ञान अनुमानजन्य मानते हैं तथा अनुपलब्धि को स्वतंत्र प्रमाण मानने से इनकार करते हैं। वैशेषिक तथा बौद्ध इस कोटि के प्रमुख ज्ञानमीमांसकों में से हैं। वेदान्त और भाट्ट मीमांसा के मतानुसार अनुपलब्धि प्रमा का एक वैध और स्वतंत्र साधन है।

धर्मकीर्ति ने दो प्रकार के प्रतिषेध अथवा अनुपलब्धि की चर्चा न्यायबिन्दु में की है —

(i) विप्रकृष्ट विषयानुपलब्धि
(ii) स्वभावानुपलब्धि

(i) विप्रकृष्ट विषयानुपलब्धि — जैसे विषय जिनमें उपलब्धि की योग्यता का अभाव हो उनकी अनुपलब्धि को विप्रकृष्ट विषयानुप-

लब्धि' कहते हैं। कारण कि विषय गगन स्वर्ग गोर के। (मेरु का पहाड़) की अनुपलब्धि विप्रकृष्ट विषयानुपलब्धि है क्योंकि स्वर्ग मेरु में उपलब्धि की योग्यता का अभाव है। अब ऐसी कालिक विप्रकृष्ट विषयानुपलब्धि का कोई तार्किक अथवा ज्ञानमीमांसीय महत्व नहीं होता। अलौकिक वस्तुएँ यथा भूत-प्रेतादि प्रत्यक्षगम्य नहीं अतएव इनकी अनुपलब्धि का कोई तार्किक अथवा तात्विक आधार नहीं। इस प्रकार की अनुपलब्धि को विप्रकृष्ट विषयानुपलब्धि कहा जाता है।

(2) स्वभावानुपलब्धि

अनुपलब्धि का दूसरा है योग्यानुपलब्धि अर्थात् वैसी वस्तुएँ जो प्रत्यक्षगम्य हों अथवा उपलब्धि की योग्यता से युक्त हों उनकी अनुपलब्धि का ही तार्किक एवं तात्विक महत्व होता है। ऐसी वस्तुएँ, जो उपलब्धि की योग्यता से युक्त होते हुए भी अनुपलब्ध हैं, उनकी अनुपलब्धि को 'स्वभावानुपलब्धि' कहते हैं। धर्मकीर्ति ग्यारह प्रकार की स्वभावानुपलब्धि की चर्चा करते हैं—

1. स्वभावानुपलब्धि

(प्रतिषेध्य के स्वभाव की अनुपलब्धि) जैसे — यहाँ धूम नहीं है। यहाँ धूम (प्रतिषेध्य विषय) उपलब्धि लक्षण से युक्त होने पर भी यहाँ उपलब्ध नहीं है।

2. कार्यानुपलब्धि (प्रतिषेध्य

के कार्य की अनुपलब्धि) जैसे — यहाँ धूम नहीं है क्योंकि यहाँ धूम, जिसे उत्पन्न कालिमा (प्रतिषेध्य विपरीत धूम का कार्य) अनुपलब्ध है।

(4) व्यापकानुपलब्धि

प्रतिषेध्य व्याप्य के व्यापक धर्म की अनुपलब्धि) जैसे यहाँ शिंशपा (प्रतिषेध्य व्याप्य) नहीं है क्योंकि यहाँ वृक्ष (व्यापक) अनुपलब्ध है।

(5) स्वभावविरुद्धोपलब्धि

प्रतिषेध्य के स्वभावविरुद्ध की उपलब्धि) जैसे यहाँ शीत (प्रतिषेध्य विषय) नहीं है क्योंकि यहाँ अग्नि (शीत का स्वभावविरुद्ध विषय) उपलब्ध है।

(5) विरुद्धकार्योपलब्धि

प्रतिषेध्य के विरुद्ध कार्य की उपलब्धि) यथा यहाँ शीत (प्रतिषेध्य विषय) नहीं है क्योंकि यहाँ धूम (प्रतिषेध्य के विरोधी विषय अग्नि का कार्य) उपलब्ध है।

(6) विरुद्धव्याप्तोपलब्धि

प्रतिषेध्य के विरुद्ध से व्याप्त धर्मान्तर की उपलब्धि) यथा, उत्पन्न हुई वस्तु का नाश भी अवश्यम्भावी है क्योंकि वह हेत्वान्तर की अपेक्षा रखता है।

(7) कार्यविरुद्धोपलब्धि

प्रतिषेध्य के कार्य के विरुद्ध की उपलब्धि) यहाँ अप्रतिबद्ध

SEPTEMBER '20

T	W	T	F	S	S
1	2	3	4	5	6
8	9	10	11	12	13
15	16	17	18	19	20
22	23	24	25	26	27
29	30				

OCTOBER '20

M	T	W	T	F	S	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

APPOINTMENTS / MEETINGS

सामर्थ्य वाले शीत का कारण नहीं है क्योंकि यहाँ अग्नि (प्रतिषेध्य के कार्य का विरोधी) उपलब्ध है।

(8) व्यापकविरुद्धोपलब्धि

(प्रतिषेध्य के व्यापक के विरुद्ध की उपलब्धि) यहाँ शीत स्पर्श नहीं है क्योंकि यहाँ अग्नि है।

(9) कारणानुपलब्धि

(प्रतिषेध्य के कारण की अनुपलब्धि) जैसे यहाँ पर धूम (प्रतिषेध्य विषय) नहीं है क्योंकि यहाँ अग्नि (धूम का कारण) अनुपलब्ध है।

(10) कारण विरुद्धोपलब्धि

(प्रतिषेध्य के कारण के विरुद्ध की उपलब्धि) जैसे, इस पुरुष को रोमहर्ष आदि नहीं हो रहे हैं, क्योंकि इसके पास अग्नि-विशेष है।

(11) कारणविरुद्धकार्योपलब्धि

(प्रतिषेध्य कारण के विरुद्ध कार्य की उपलब्धि) जैसे इस प्रदेश में रोमहर्ष आदि से युक्त पुरुष नहीं है क्योंकि यहाँ धूम है।